The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 4 | Issue 5 | May 2026
ISSN: 2583-973X (Online), SJIF IF: 5.6
Website: www.theacademic.in

# भारत में धर्मनिरपेक्षता: संवैधानिक प्रावधान और समकालीन चुनौतियाँ

**प्रकाश कुमार पटेल**

लेखक दयाल सिंह कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय) में राजनीति विज्ञानं के सहायक प्रोफेसर हैं.

**DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.20699190**

भारत विश्व में सबसे ज्यादा विविधतापूर्ण देशों में से एक है, जहाँ समाज धर्म, भाषा, नस्ल, और जाति और पहचान के आधार पर विविधतापूर्ण है. लेकिन इन विविधताओं के बावजूद भी भारतीय समाज में एक विशेष प्रकार की आतंरिक एकता पाई जाती है; जो शुरू से ही इसके मजबूती का आधार रही है. भारत में रीती-रिवाज, परंपरा और धार्मिक विविधता सांस्कृतिक और सभ्यतागत एकता में विसरित हो जाती हैं। इसीलिए भारत को विविधताओं में एकता वाले देश के रूप में चिन्हित किया जाता है. भारत संसार के उन कुछ गिने-चुने देशों की श्रेणी में आता है जहाँ विश्व में पाए जाने वाले लगभग सभी धर्मों को मानने वाले लोग पाए जाते है और वे सदियों से परस्पर मिलजुल कर रहते आये हैं. भारतीय समाज के एकता का आधार राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की अहिंसा, महान शासक अकबर की सहिष्णुता तथा सम्राट अशोक की शांतिप्रियता रही है. यही कारण है कि धार्मिक अलगाव के स्थान पर यहाँ परस्पर धार्मिक सहिष्णुता पर आधारित सर्वधर्मसमभाव की स्थिति पाई जाती है. भारत में अंग्रेजी शासन के उपनिवेशवादी नीतिओं और भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के दौरान कुछ उग्रवादी नेताओं द्वारा राजनितिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए धार्मिक आधार पर लोगों को गोलबंद करने के कारण भारत में धार्मिक कट्टरता फैली जो अंततः भारत के विभाजन का कारण बनी. लेकिन धार्मिक आधार पर देश के विभाजन के बावजूद भी भारत ने सर्वधर्म सद्भाव की अपनी ऐतिहासिक विरासत को कायम रखते हुए पाकिस्तान से उलट अपने आप को एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र के रूप में कायम रखा; जो तमाम उतार-चढ़ाव के बावजूद भी अपने पहचान को बनाये हुए है.

## धर्मनिरपेक्षता का अर्थ और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

“धर्मनिरपेक्ष” शब्द अंग्रेजी के “secular” शब्द का हिंदी रूपांतरण है. यह एक यूरोपीय अवधारणा है, जिसका शाब्दिक अर्थ राज्य और धर्म के सैद्धांतिक अलगाव से है. धर्मनिरपेक्ष शब्द का प्रथम बार प्रयोग 1648 में उस समय किया गया जब यूरोप में चर्च की संपत्ति को पूर्णतः नरेशों के नियंत्रण में कर दिया गया था. धर्मनिरपेक्षता का अभिप्राय है कि राज्य के द्वारा धार्मिक संस्थाओं का कोई समर्थन नही किया जायेगा, राज्य के विद्यालयों में कोई धार्मिक शिक्षा नही दी जाएगी.**(नारंग 2007 : 357**) अर्थात धर्मनिरपेक्षता एक ऐसे सिद्धांत पर आधारित व्यवस्था है,

जिसके तहत राज्य, उसकी सरकार और उस सरकार के प्रतिनिधियों का धार्मिक संस्थाओं और धार्मिक शिक्षाओं से अलगाव किया जाता है. धर्मनिरपेक्षता का एक स्वरुप राज्य से सभी धर्मों और धार्मिक शिक्षाओं से अलग रहने, या किसी भी धार्मिक विश्वास से राज्य की तटस्थता का है. यह किसी भी नागरिक पर राज्य द्वारा किसी भी धर्म विशेष को थोपने, या बलपूर्वक किसी व्यक्ति को उसके पसंद के धर्म से विच्छेद करने को ख़ारिज करता है. अर्थात धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा राज्य के सार्वजनिक गतिविधियों में किसी भी धर्म विशेष के प्रचार-प्रसार करने या किसी धर्म विशेष द्वारा राज्य और उसके संस्थाओं को प्रभावित करने की प्रक्रिया का विरोध करता है.

आज विश्व में सबसे बड़ी चुनौती विभिन्न विविधताओं के बीच एक सामंजस्यपूर्ण एकता स्थापित करने की है. वैसे तो विश्व में भिन्नताएं अनेक आधारों(सामाजिक,राजनीतिक,आर्थिक,सांस्कृतिक और धार्मिक) पर पाई जाती हैं; लेकिन धर्म के आधार पर उत्पन्न भिन्नताएं समाज में असहिष्णुता के स्तर को सबसे ज्यादा बढ़ाती हैं. अगर हम विश्व इतिहास का अध्ययन करे, तो पाते हैं कि आज अपने को सबसे अधिक आधुनिकता का पर्याय कहने वाले यूरोप में किसी समय महान वैज्ञानिक गलीलियों को सिर्फ इस लिए यातनाएं दी गयी थी कि उनके द्वारा दिया गया सिद्धांत कि, सूर्य पृथ्वी का नही, बल्कि पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा करती है; उस समय के कैथोलिक (ईसाई) मान्यताओं के खिलाफ था. इसप्रकार प्राचीन से लेकर आधुनिक समाज में भी किसी भी देश के लिए सबसे बड़ी चुनौती यहीं है कि वहां पाए जाने वाले विभिन्न धार्मिक और सांस्कृतिक समूहों के मध्य किस प्रकार से एकता और भाईचारे का माहौल स्थापित किया जाये; जिससे राष्ट्रीय एकता और शांति का वातावरण स्थापित किया जा सके. विश्व स्तर पर भी सबसे बड़ी चुनौती यही रही है कि किस प्रकार विश्व में पाए जाने वाली विभिन्न धार्मिक संस्कृतियों के मध्य सहिष्णुता का माहौल पैदा किया जाए. विश्व में व्याप्त विविधताओं और बढ़ते धार्मिक-सांस्कृतिक संघर्षों के आधार पर ही प्रसिद्द राजनीतिक वैज्ञानिक सैमुएल पी. हंटिंगटन ने अपनी प्रसिद्द कृति "क्लैश ऑफ सिविलाइज़ेशन" में विश्व में होने वाले अगले महायुद्ध को दो संस्कृतियों के मध्य होने वाले संघर्ष के रूप में होने की भविष्यवाणी की है. अतः दूसरे विश्वयुद्ध के बाद शुरू हुए वि-उपनिवेशवाद की प्रक्रिया के बाद अस्तित्व में आये अनेक स्वतंत्र राज्यों में सामाजिक-धार्मिक विविधता को समायोजित करते हुए राष्ट्रीय एकीकरण को सुनिश्चित करने में धर्मनिरपेक्षता एक महत्वपूर्ण संकल्पना है. इसीलिए भारत सहित विश्व के सभी धार्मिक विविधताओं वाले देशों में विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच एकता, भाईचारा और सहिष्णुता की भावना को बढ़ावा देने के लिए, राज्य या सत्ता द्वारा किसी एक धर्म के साथ भेदभाव तथा दुसरे की पक्षधारिता पर रोक लगाने तथा धार्मिक मामलों से राज्य की तटस्थता को सुनिश्चित करने के लिए एक सिद्धांत के रूप में "धर्मनिरपेक्षता" की नीति का पालन किया जाता है.

ऐतिहासिक रूप से धर्मनिरपेक्षता की जरुरत उस समय महसूस हुई जब यूरोप में राज्य और चर्च के बीच का विवाद अपने चरम पर पहुच गया था. दोनों में से कोई एक दूसरे की सत्ता को स्वीकार करने को तैयार नहीं था। जहाँ राज्य अपने कानूनी सत्ता को राज्य की सीमा के भीतर सर्वोच्य मानता था, वही धर्म (चर्च) अपनी अध्यात्मिक सत्ता को

राज्य की कानूनी सत्ता से ऊपर मानता था; तथा राज्य की सर्वोच्यता को एक बुराई मानता था. इसप्रकार धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा आधुनिक राज्य के एक वैचारिक आधार के रूप में उभरा, जिसके तहत धर्म और उसकी संस्थाओं को सरकारी नियंत्रण में रखा जाता है, और कानून के माध्यम से धर्म के अनुदारवादी सिद्धांतों में अपेक्षित बदलाव कर सामाजिक-आर्थिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को आगे बढाया जाता है. एक सिद्धांत के रूप में धर्मनिरपेक्षता की नीति का इस्तेमाल कर मुस्तफा कमाल पाशा ने तुर्की और माओत्से तुंग ने चीन का आधुनिकीकरण किया.  जहाँ मध्यकाल में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा राज्य और चर्च के बीच कार्यात्मक और सैद्धांतिक विभाजन पर आधारित थी; वही आधुनिक काल में राज्य की शक्तियों में हुई लगातार बढ़ोतरी के कारण इसके स्वरुप में बदलाव आया और यह राज्य द्वारा कानून के शासन और लोक-कल्याण की दृष्टि से सभी धर्मों में समानता के आधार पर हस्तक्षेप के रूप में परिवर्तित हो गया.

**धर्मनिरपेक्षता का सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य**

विश्व स्तर पर धर्मनिरपेक्षता की दो प्रकार की अवधारणायें पाई जाती हैं- (1) फ्रांसीसी अवधारणा, और (2) अमेरिकी अवधारणा. पहली अवधारणा के अनुसार धार्मिक संस्थाओं के द्वारा राज्य की गतिविधियों में किसी प्रकार का हस्तक्षेप नही हो सकता. क्योकि धर्म और राजनीति के मध्य विभाजन ही धर्मनिरपेक्षता का आधार है. धर्मनिरपेक्षता की फ्रांसीसी अवधारणा धार्मिक मामलों में राज्य के युक्तियुक्त हस्तक्षेप को उचित मानती है. लेकिन राज्य ऐसे किसी भी हस्तक्षेप को अंजाम देते समय सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार करेगा. वही धर्मनिरपेक्षता की दूसरी अवधारणा के अनुसार न तो राज्य और नही धर्म एक दूसरे के मामलों में किसी भी आधार पर कोई हस्तक्षेप करेगे. अर्थात धर्मनिरपेक्षता का अमेरिकी मॉडल धर्म और राजनीति के बीच पूर्ण विभाजन पर बल देता है.

धर्मनिरपेक्षता की इन दो वैश्विक संकल्पनाओं के अतिरिक्त एक अन्य आधुनिक संकल्पना उभर कर सामने आई है; जो राज्य द्वारा सभी धर्मों के समान संरक्षण पर आधारित है. धर्मनिरपेक्षता की यह अवधारणा वैसे विकासशील और बहुधार्मिक समाजों में पाई जाती है; जहाँ विभिन्न धर्मावलम्बियों की संख्या और उनके प्रभाव के बीच काफी असमानताएं पाई जाती है. अर्थात जहाँ कोई धर्म बहुत ज्यादा प्रभावी हो और वहां अन्य अल्पसंख्यक धार्मिक समूह भी पाए जाते हों, तो ऐसे समाजों में अल्पसंख्यकों की परम्पराओं, विशिष्ट संस्कृति और रीती-रिवाजों को सुरक्षित व प्रोत्साहित करने के लिए राज्य धार्मिक प्रोत्साहन की नीति को अपनाता है. लेकिन ऐसा करते हुए राज्य किसी धार्मिक समूह के साथ किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं करता है। धर्मनिरपेक्षता की दोनों वैश्विक अवधारणायें नकारात्मक प्रकृति की है; जो पच्छिमी देशों, मुख्यतः यूरोप और अमेरिका में पाई जाती है. वहां धर्मनिरपेक्षता के उद्भव से पहले राज्य और चर्च के बीच लंबा-लम्बाता संघर्ष लंबालंबाम्बा इतिहास रहा है। अतः वहां धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा नकारात्मक प्रकृति की है; क्योकि यह राज्य और चर्च के बीच एक सीमा रेखा खीचकर दोनों को एक दुसरे से अलग करती है. वही धर्मनिरपेक्षता की आधुनिक एशियाई अवधारणा यूरोपीय अवधारणा से अलग

सकारात्मक प्रकार की है; जो मुख्यतः उन देशों में पाई जाती है, जहाँ असमान प्रभाव वाले अनेक धर्म पाए जाते हैं. इसलिए उन धर्मों की पहचान और संरक्षण के लिए यह आवश्यक है कि राज्य उन्हें सहायता प्रदान करे।

**धर्मनिरपेक्षता की भारतीय व्याख्या**

डोनाल्ड स्मिथ ने अपनी रचना **"इंडिया एज ए सेक्युलर स्टेट"** में धर्मनिरपेक्षता को परिभाषित करने के लिए राज्य, धर्म और व्यक्ति के बीच के अंतर्संबंधो पर प्रकाश डाला है. स्मिथ के अनुसार एक राज्य सही मायनों में धर्मनिरपेक्ष तभी कहा जायेगा; १, जब राज्य का अपना कोई धर्म नही होगा अर्थात राज्य बिना इस बात की परवाह किये कि किसी धर्म को मानने वाले लोगों की संख्या कितनी है; किसी धर्म का पक्ष नही लेगा. २, राज्य किसी व्यक्ति के साथ उसके धर्म के आधार पर कोई भेदभाव या पक्षपात नही करेगा अर्थात व्यक्ति से व्यवहार करते समय राज्य यह नही देखेगा कि वह किस धर्म का है. ३, प्रत्येक व्यक्ति अपने आस्था और पसंद के अनुसार कोई भी धर्म चुनने को स्वतंत्र होगा तथा राज्य की इसमें कोई भूमिका नही होगी कि व्यक्ति किस धर्म का चुनाव करे. इसप्रकार डोनाल्ड स्मिथ व्यक्ति-राज्य सम्बन्ध में धर्म, व्यक्ति-धर्म सम्बन्ध में राज्य और राज्य-धर्म सम्बन्ध में व्यक्ति की भूमिका को ख़ारिज करते है.**(स्मिथ 1963:49)**

भारत में बहुतायत लोग धर्मनिरपेक्षता की संकल्पना के समर्थक नही हैं और वे भारत में प्रचलित धर्मनिरपेक्षता को भारतीय प्रकृति के अनुसार नही मानते हुए इसे विदेश, विशेषकर यूरोप से आयातित मानते हैं. अतः उनके अनुसार विदेश से आयातित धर्मनिरपेक्षता की यह अवधारणा भारतीय स्थितियों के अनुकूल नहीं है। भारतीय समाज शुरू से ही धर्म प्रधान समाज रहा है. यहाँ का समाज अपनी वैधता धर्म से ग्रहण करता है, और राजनीति का व्यवहार समाज के व्यवहार पर निर्भर करता है. अतः धर्मनिरपेक्षता की सैद्धांतिक संकल्पना जो धर्म और राजनीति के अलगाव पर आधारित है; भारत में सफल नही हो सकती क्योकि यहाँ धर्म और राजनीति में अत्यधिक गहरा सम्मिश्रण है. इस मान्यता के प्रवर्तक भारतीय सामाजिक विद्वान टी.एन.मदान हैं, जिनके अनुसार भारत जैसे देश में 'आध्यात्मिक मानववाद' की संकल्पना अत्यधिक महत्वपूर्ण है और धर्म के द्वारा मूलतः सार्वजनिक नैतिकता का निर्माण होता है, जो पश्चिमी विश्व के धर्मनिरपेक्षता एवं राजनीति और नैतिकता के विभाजन से बेहतर विकल्प प्रस्तुत करती है; क्योकि भारत में धर्म का आस्था के रूप में अत्यधिक महत्व है और आस्थाएं भिन्न-भिन्न भी हो सकती हैं. अतः मदान के अनुसार पंथनिरपेक्षता साम्प्रदायिकता का एक बेहतर उत्तर समाधान नहीं है बल्कि समाज में धार्मिक मान्यताओं को और गहरा कर साम्प्रदायिकता का सामना किया जा सकता है.

**भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति**

भारत विश्व का सबसे ज्यादा विविधतापूर्ण देश है. यहाँ का समाज धर्म, भाषा, नस्ल और जाति के आधार पर विविधताओं से भरा पड़ा है। लेकिन इन विविधताओं के बावजूद भी भारतीय समाज में एक विशेष प्रकार की

आतंरिक एकता पाई जाती है; जो शुरू से ही इसके मजबूती का कारण रही है. भारत में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा आधुनिक, विकासशील अवधारणाओं से अधिक निकट है। यहाँ धार्मिक अल्पसंख्यकों की संस्कृति और पहचान को सरंक्षण प्रदान करने के लिए संविधान में अनेक प्रावधान किये गये हैं और कुछ मामलों में राज्य उनके पक्ष में सकारात्मक भेदभाव की नीति अपनाता है; ताकि उनकी विशिष्ट पहचान को सुरक्षित रखा जा सके. प्रो. राजीव भार्गव के अनुसार भारत में धर्मनिरपेक्षता न तो पश्चिमी अवधारणा का पालन करता है; और नही यह पूर्णतः एशियाई धर्मनिरपेक्षता, जो सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार और समान प्रोत्साहन पर आधारित है; का पालन करता है. यहाँ राज्य न तो सभी धर्मों में सामान रूप से हस्तक्षेप करता है; और नही सभी को एक सामान सहायता देता है. बल्कि प्रो. राजीव भार्गव के अनुसार भारतीय धर्मनिरपेक्षता की प्रकृति राज्य द्वारा सभी धर्मों के प्रति अपनाये जाने वाली **"सैद्धांतिक दूरी"(PRINCIPAL DISTANCE)** पर आधारित है; जिसका तात्पर्य है कि जहाँ राज्य को व्यक्ति की स्वतंत्रता, समाज में सुरक्षा और समानता स्थापित करने के लिए अगर जरुरी हो तो वहां वह धर्म में हस्तक्षेप करेगा; अन्यथा वह धर्मों से दूरी बनाये रखेगा. **(भार्गव 1998 : 89)** अर्थात भारतीय धर्मनिरपेक्षता के लिए यह आवश्यक नही है कि राज्य सभी धर्मों में समान रूप से हस्तक्षेप करे ही. इसी आधार पर जब भारतीय राज्य ने हिन्दू धर्म को समानता पर आधारित करने के लिए "हिन्दू कोड बिल" के जरिये महिलाओं और दलितों के अधिकारों को मान्यता प्रदान की तो उसे तमाम रुढ़िवादी हिन्दुओं के विरोध के बावजूद भी एक सही कदम माना गया. लेकिन जब भारतीय सर्वोच्य न्यायालय ने शाहबानों केस में इस्लाम धर्म में महिलाओं को समानता का दर्जा देने की दिशा कदम उठाया तो मुस्लिम रुढ़िवादियों के दबाव में मुस्लिम वोट बैंक को ध्यान में रखते हुए राजीव गाँधी की सरकार ने सर्वोच्य न्यायालय के फैसले को पलट दिया, जिसकी व्यापक आलोचना हुई.

अगर हम ऊपर वर्णित धर्मनिरपेक्षता के अर्थ का अध्ययन कर भारत में मौजूद धर्मनिरपेक्षता के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष के साथ उसकी तुलना करें तो पाते हैं कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता कई मामलों में अपनी एक अलग पहचान रखती है. भारतीय संविधान में बिना किसी धार्मिक भेदभाव के सभी नागरिकों को सामान अधिकार दिए जाने के साथ-साथ धार्मिक अल्पसंख्यकों, विशेषकर मुस्लिमों की कमजोर स्थिति को ध्यान में रखते हुए उनके प्रति सकारात्मक भेदभाव की नीति अपनाई गयी है; ताकि उनकी विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान और परम्पराओं को अक्षुण्ण रखा जा सके. धर्मनिरपेक्षता की पच्छिमी अवधारणा के विपरीत जिसमे राज्य धार्मिक मामलों में निष्क्रियता की नीति अपनाता है; भारतीय धर्मनिरपेक्षता सभी धर्मों को समान और जरुरत पड़ने पर कम जनसँख्या वाले धार्मिक अल्पसंख्यकों को विशेष प्रोत्साहन देता है. भारत में पच्छिमी विश्व की तरह कभी भी राज्य और धर्म के बीच टकराव की स्थिति पैदा नही हुई तथा दोनों ने कभी भी परस्पर एक दूसरे की सीमा का अतिक्रमण नही किया. शायद यही कारण है कि यहाँ हिन्दू बहुसंख्या होने के बावजूद अकबर जैसा एक धार्मिक रूप से सहिष्णु मुस्लिम शासक देखने को मिलता है; जो हिन्दुओं की धार्मिक आस्था के प्रति उतना ही सम्मान रखता है जितना की

मुस्लिमों की आस्था के प्रति. वही काश्मीर की मुस्लिम जनता एक हिन्दू शासक हरि सिंह/गुलाब सिंह में विश्वास रखती है. विश्व के इतिहास को उठाकर देखने पर पता चलता है कि सबसे ज्यादा कट्टरता धर्म के क्षेत्र में देखने को मिलती है. यूरोप में गैलिलिओं जैसे वैज्ञानिक को सिर्फ इसलिए दण्डित किया गया क्योकि उसके द्वारा दिया गया सिद्धांत धर्म की मान्यताओं के विपरीत था. लेकिन दूसरी तरफ अगर भारतीय समाज पर नज़र डालें तो हम पाते हैं कि यहाँ धार्मिक रूप से विरोधी मत रखने वाले लोगों के प्रति न सिर्फ सहिष्णुता का भाव पाया जाता है; बल्कि यहाँ उनके प्रति आदर का भाव पाया जाता है. हिन्दू धर्म से विपरीत मत रखने वाले गौतम बुद्ध या महावीर को यहाँ महात्मा पद से विभूषित किया जाता है. इसके अतिरिक्त चार्वाक जैसे नास्तिकवादी को भी भारतीय समाज महात्मा चार्वाक कहता है.

धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा सर्वव्यापक नहीं है। अर्थात यह एक सापेक्षिक संकल्पना है, जो समय और परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती है। धर्मनिरपेक्षता की कोई एक सर्वमान्य परिभाषा नहीं दी जा सकती। इसलिए धर्मनिरपेक्षता का एक मॉडल सभी जगह उपयुक्त नही हो सकता. विश्व के हर भाग में धर्मनिरपेक्षता को अपनाये जाने के कारण अलग-अलग कारण रहे हैं; अतः उसका स्वरुप भी हर देश के अनुसार बदलता रहता है. जहाँ यूरोप में यह राज्य और चर्च के मध्य संघर्ष की पृष्ठभूमि में उत्पन्न हुआ. वही भारतीय सन्दर्भ में एक विविधतापूर्ण भारतीय समाज में यह विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच सामंजस्य और भाईचारा स्थापित करने का माध्यम है.**(दुबे 2005 : 50)**

विभिन्न विचारकों के अनुसार भारत में अनेक धार्मिक समुदाय के लोग हैं और समाज धार्मिक है. इसलिए धर्मनिरपेक्षता की उपयोगिता यहाँ इस मामलें में है कि यह विभिन्न धर्मों के मध्य होने वाले विवादों को ख़त्म करने, उनके बीच मेलजोल को बढ़ाने और अल्पसंख्यक समुदायों के साथ होने वाले संभावित भेदभाव को रोकने में किस प्रकार की भूमिका निभा सकता है. इस मत के अनुसार भारत में धर्मनिरपेक्षता की संकल्पना सभी धर्म के लोगों के लिए बिना किसी भेदभाव के धार्मिक स्वतंत्रता की गारंटी है. आशीष नंदी जैसे विचारकों के अनुसार पश्चिमी धर्मनिरपेक्षता की संकल्पना इस मूल मान्यता पर आधारित है कि व्यक्ति अपने निजी जीवन में धार्मिक होगा, जबकि सार्वजनिक जीवन में वह धर्म का प्रयोग नही करेगा अथवा वैज्ञानिक प्रवृति को अपना लेगा. लेकिन भारतीय समाज को इससे अलग मानते हुए, वे कहते हैं कि भारत में ऐसी कोई रेखा नहीं खींची जा सकती। क्योकि भारत में कुछ ऐसे लोग हैं जो अपने निजी और सार्वजनिक दोनों जीवन में धर्म को नही मानते; वही कुछ लोग निजी और सार्वजनिक दोनों जीवन में धर्म को मानते हैं. जहाँ आधुनिक भारत के निर्माता और भारत के प्रथम प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू निजी और सार्वजनिक दोनों में धर्म को नही मानते थे, वहीँ राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी निजी और सार्वजनिक दोनों मामलों में धर्म में निष्ठां रखते थे; और धर्म को विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच भाईचारे के प्रसार का एक सशक्त माध्यम मानते थे.

**संविधान सभा में धर्मनिरपेक्षता पर विमर्श**

1947 में सांप्रदायिक आधार पर हुए देश विभाजन के बाद उपजी परिस्थितियों में भारत को धर्मनिरपेक्ष छवि प्रदान करना अपने आपमें एक चुनौतीपूर्ण कार्य था. धार्मिक गोलबंदी के कारण कुछ राजनीतिक दल और व्यक्ति भारत को भी मुस्लिम पाकिस्तान का हिन्दू प्रतिरूप बनाना चाहते थे. लेकिन हमारे संविधान निर्माताओं की दूरदर्शिता और पंडित नेहरु और डॉ अम्बेडकर की लोकतंत्र और धर्मनिरपेक्षता के प्रति आगाध वैचारिक निष्ठां के कारण भारत अपनी धर्मनिरपेक्ष छवि को बनाये रखने में सफल रहा; जो सदियों से इसकी विरासत रही थी. भारतीय धर्मनिरपेक्षता की विरासत को "गाँधी-नेहरु विरासत " के नाम से भी जाना जाता है; क्योकि भारत में आधुनिक धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को गढ़ने में इन दो नेताओं की महत्वपूर्ण भूमिका थी. लेकिन इन दोनों राष्ट्र निर्माताओं में धर्मनिरपेक्षता के स्वरुप को लेकर मतभिन्नता थी. जहाँ श्री गाँधी अपने निजी और सार्वजानिक दोनों जीवन में एक धार्मिक व्यक्ति थे, और वे राजनीति और धर्म के मध्य नजदीकी संबंध के हिमायती थे. गाँधी राजनीति को नैतिकता के मूल्यों पर आधारित करना चाहते थे; और उनके नैतिकता के मूल्य धार्मिक रंग में रंगें हुए थे. जबकि नेहरु एक नास्तिक व्यक्ति थे और वे गाँधी से उलट राजनीति व धर्म के बीच किसी भी प्रकार का कोई सम्बन्ध रखने के खिलाफ थे. वे भारत को मुस्तफा कमालपाशा के तुर्की और लेनिन के सोवियत रूस जैसा एक धर्मनिरपेक्ष देश बनाना चाहते थे; लेकिन एक लोकतान्त्रिक होने के कारण नेहरु का तरीका कमालपाशा और लेनिन से भिन्न था. वे धर्मनिरपेक्षता को भारतीयों के स्वभाव में समाविष्ट करना चाहते थे।**(दुबे 2007 : 35)** एक बात पर गाँधी और नेहरु दोनों सहमत थे कि धर्मनिरपेक्षता भारत जैसे धार्मिक बहुलता वाले देश में सभी धर्मों के मध्य सर्वधर्म समभाव और भाईचारे की भावना को बढ़ाने में एक सशक्त माध्यम बन सकता है. स्वतंत्रता संग्राम के आखिरी दिनों में जब देश में धार्मिक कट्टरता और धार्मिक दंगे होने लगे थे; तथा धर्म के आधार पर जनता को गोलबंद करने का प्रयास हो रहा था, तो उस परिवेश में गाँधी को यह आभास हो गया था कि उनका धर्म और राजनीति का सम्बन्ध फिरकापरस्त ताकतों को धर्म के बेजा इस्तेमाल का मौका न दे सकता है और भारत धार्मिक कट्टरता का अड्डा न बन सकता है. अतः 1940 के दशक के उत्तरार्थ में गाँधी धर्म को व्यक्ति का निजी मामला मानने लगे थे. **(दुबे 2007 : 36)**

जब संविधान सभा देश का संविधान बनाने के लिए एकत्रित हुई धर्मनिरपेक्षता के मुद्दे पर संविधान सभा के सदस्यों के बीच व्यापक और तीखे मतभेद थे. संविधान सभा के दो प्रमुख सदस्य डॉ भीमराव आंबेडकर और पंडित जवाहर लाल नेहरु ने अल्पसंख्यक-बहुसंख्यक संबंधों और धर्मनिरपेक्षता के सन्दर्भ में अपने महत्वपूर्ण विचार दिए. **(शर्मा 2007 : 117)**

डॉ अम्बेडकर के अनुसार "*बहुमत के लिए यह उचित नही है कि वह अल्पसंख्यकों और उनकी संस्कृति के आस्तित्व को अस्वीकार करे. लेकिन यह भी समान रूप से अनुचित होगा कि अल्पसंख्यक राष्ट्रीय मुख्यधारा से*

*अलग-थलग बने रहें. इसका ऐसा हल इस प्रकार से निकाला जाना चाहिए कि इससे दो महत्वपूर्ण।सकें।पूर्ण उद्देश्य सिद्ध हो पायें. प्रारंभ में तो अल्पसंख्यकों के अस्तित्व को मान्यता दी जानी चाहिए, किन्तु अंतिम उद्देश्य यह होना चाहिए कि अल्पसंख्यक और बहुसंख्यक आगे चलकर एक दिन एक दूसरे विलीन हो जाएँ."*

वहीँ पंडित जवाहर लाल नेहरु में अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा था कि " *मेरे विचार में जैसा हमारा देश भूतकाल में चलता रहा है और संरक्षण के नाम पर अवरोध बनाये जाते रहें है वैसा ही चलने देना ठीक नही होगा. वस्तुतः किसी अवरोध से जो अल्पसंख्यकों को बहुसंख्यकों से अलग करता है. किसी अल्पसंख्यक समाज या समूह को संरक्षण नहीं मिलता। इससे वे अस्थाई रूप से पृथक समूह बन जाते हैं और देश के अन्य समूहों के साथ निकट आने की प्रवृति रुक जाती है."*

सेकुलरवाद के मॉडल पर भले ही सीधे चर्चा न हुई हो, पर भारत में राज्य और धर्म के आपसी संबंध और धर्म के संविधानिक स्वरुप को लेकर बहुत ही विस्तृत और गहन विमर्श हुआ था. इस सम्बन्ध में संविधान सभा में मुख्यतः चार रवैये थे-

पहला विचार यह था कि राज्य सभी धर्मों से बराबर की दूरी रखे, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार केवल पूजा तक ही सीमित रहे, समान नागरिक संहिता को बुनियादी अधिकार बनाया जाये, राज्य की मदद से चलने वाली संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा कतई न दी जाये, किसी भी किस्म के अल्पसंख्यकों को सार्वजनिक मान्यता न दी जाये, उनके लिए किसी भी प्रकार का (विधायिकाओं या नौकरियों में) आरक्षण न हो, राज्य समुदायों का नही बल्कि सिर्फ व्यक्तियों के अधिकारों की सुरक्षा करें. **(austin, 2014, pp. 83-84)**

दूसरा विचार था कि राज्य सभी धर्मों का बराबर सम्मान करे, धार्मिक आज़ादी, पूजा करने के अधिकार तक सीमित न रह कर धार्मिक आचरण तक विस्तारित की जाये, समुदायों को अपने-अपने निजी कानून रखने का बुनियादी अधिकार हो, धार्मिक शिक्षा देने वाली संस्थाओं को भी सरकार की मदद मिले, भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों के सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा हो, धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए विभिन्न आरक्षण का प्रावधान हो.

तीसरा विचार धार्मिक पूजा और समान नागरिक संहिता के साथ धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए आरक्षण को जोड़ना चाहता था.

वही चौथा विचार धार्मिक आज़ादी की व्याख्या पूजा से आगे बढ़ा कर धार्मिक आचरण तक करने के लिए तैयार था, लेकिन वह धर्म आधारित आरक्षण देने के लिए तैयार नही था. एक तरह से देखा जाये तो तीसरे और चौथे विचारों की कोशिश उपरोक्त दोनों विचारों के बीच का रास्ता निकालने की थी.

इसप्रकार अगर हम उपरोक्त उल्लेखित चारों विचारों का विश्लेषण करे, तो पाते हैं कि भारतीय संविधान में दिए गये प्रावधान मुख्यतः चौथी विचारधारा से ज्यादा प्रभावित हैं. इस कारण भारत का धर्मनिरपेक्ष राज्य न केवल व्यक्ति के अधिकारों की बल्कि समुदायों के सांस्कृतिक अधिकारों की रक्षा करने के लिए भी प्रतिबद्ध है. **(Jha, 2002)**

**भारत में धर्मनिरपेक्षता संबंधी संविधानिक प्रावधान**

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद बने संविधान में हालाँकि "धर्मनिरपेक्ष" शब्द का उल्लेख तो नही किया गया; लेकिन संवैधानिक प्रावधानों के माध्यम से यह सुनिश्चित किया गया कि धार्मिक व भाषाई अल्पसंख्यकों के हितों को सुरक्षित रखा जा सके. भारत जैसे एक धार्मिक देश में धर्म के इसी महत्व को देखते हुए व्यक्ति के धार्मिक अधिकारों को मौलिक अधिकार के रूप में संविधान का भाग बनाने के साथ-साथ धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के हितों को सुरक्षित रखने के अनेक उपबंध किये गये. जहाँ संविधान द्वारा मौलिक अधिकारों के अध्याय में अनुच्छेद-25 से 28 तक सभी नागरिकों को धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया गया, वहीं अनुच्छेद-29 एवं 30 के द्वारा भाषाई व धार्मिक अल्पसंख्यकों को उनकी अपनी भाषा और संस्कृति में शिक्षा का अधिकार प्रदान किया गया.

संविधान की उपरोक्त धाराओं के अतिरिक्त भारतीय संविधान के अन्य प्रावधानों के माध्यम से भी धर्म की स्वतंत्रता तथा अल्पसंख्यकों की सांस्कृतिक एवं शैक्षिक स्वतंत्रता को सुरक्षा प्रदान की गयी है. यह सभी धर्मों को समूहगत स्वतंत्रता के साथ साथ प्रत्येक व्यक्ति को धार्मिक स्वतंत्रता प्रदान की गयी है. वहीं दूसरी तरफ, यह नागरिकों को समानता का अधिकार भी प्रदान करता है. अर्थात धर्म के आधार पर कोई भेदभाव नही किया जायेगा(अनुच्छेद-१५.१), इसीप्रकार सार्वजनिक नौकरियों में समान अवसर (१६.१.२), शैक्षिक संस्थाओं में कोई भेदभाव नही करना(अनुच्छेद-२९.२) और कोई सांप्रदायिक चुनाव मंडल न बनाना(325) भी प्रदान किया गया है. इसके अतिरिक्त धर्म और राज्य को अलग कर दिया गया है अर्थात धर्म को प्रोत्साहित करने के लिए कोई कर नही लगाना(अनुच्छेद-२७) और सरकारी क्षेत्र में किसी भी प्रकार की धार्मिक शिक्षण संस्थाओं को न खोलना(अनुच्छेद-२८). इसप्रकार संविधान में वर्णित उपरोक्त प्रावधानों से स्पष्ट है कि संविधान की प्रवृति न तो किसी धर्म का विरोध करने की है और न इसे तर्क संगत बताने की. इसमें धार्मिक मामलों में राज्य की तटस्थता एवं निष्पक्षता बनाये रखने की प्रवृति है. **(Narang, 2007)**

संविधान में अल्पसंख्यकों को सुरक्षा और समानता प्रदान करने के लिए अनेक प्रकार के प्रावधान किये गये थे; लेकिन संविधान में **"धर्मनिरपेक्ष"** शब्द का प्रयोग नही किया गया था. संविधान लागू होने के बाद से ही देश में अल्पसंख्यकों की सुरक्षा,उनके सम्मान व विश्वास को कायम रखने के लिए विभिन्न वर्गों द्वारा धर्मनिरपेक्षता को भारतीय संविधान का अंग बनाने की मांग की जाती रही थी. उनका तर्क था कि एक धार्मिक, भाषाई व जातीय रूप से विविध समाज में सभी धार्मिक समूहों के मध्य समानता कायम करने व उन्हें देश की मुख्य धारा में शामिल

करने के लिए धर्मनिरपेक्षता को संविधान का भाग बनाना आवश्यक है. इसप्रकार विभिन्न वर्गों की मांगों को ध्यान में रखते हुए, अल्पसंख्यक वर्गों के मध्य एक नया विश्वास पैदा करने तथा अपनी पार्टी और सरकार की नीतियों को लागू करने के लिए श्रीमती इंदिरा गाँधी की सरकार ने 1976 में संविधान के 42वें संविधान संशोधन के द्वारा समाजवाद के साथ-साथ धर्मनिरपेक्षता को संविधान के प्रस्तावना में शामिल कर इसे संविधान का भाग बनाया.

**आलोचनात्मक विश्लेषण**

स्वतंत्रता से लेकर अबतक अगर भारतीय लोकतंत्र के विकासयात्रा पर यदि नज़र डाला जाये तो हम यह पाते हैं कि धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए तमाम संवैधानिक प्रावधान होने के बावजूद भी देश ने धार्मिक आधार पर काफी दंगों और तनावों को झेला है. राजनीतिक हितों की पूर्ति के लिए धार्मिक भावनाओं को भड़काने के साथ-साथ विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच पैदा होने वाले छोटे-छोटे विवादों को भी सांप्रदायिक रंग दे दिया जाता है. देश में पैदा होने वाले छोटे-मोटे विवादों व तनावों के आधार पर भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आलोचना भी की जाती रही है. प्रसिद्द भारतीय विद्वान और नोबल पुरस्कार विजेता प्रो. अमर्त्य सेन ने अपनी चर्चित पुस्तक ***"ARGUMENTATIVE INDIANS"*** में भारतीय धर्मनिरपेक्षता की विभिन्न आधारों पर की गई आलोचनाओं की चर्चा करते हुए उनका समुचित जवाब भी दिया है. प्रो. सेन ने अपनी पुस्तक में निम्नलिखित आधारों पर भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आलोचनाओं की चर्चा की है-

1. कुछ विदेशी विद्वानों और पत्रकारों के द्वारा भारतीय धर्मनिरपेक्षता को पूर्णतः नकार दिया जाता है. इस धारणा के अनुसार भारत में कोई धर्मनिरपेक्षता नही है; बल्कि यह मुस्लिम पाकिस्तान का हिन्दू प्रतिरूप है
2. दूसरी आलोचना मुख्यतः हिन्दू पक्षीय दलों द्वारा किया जाता है. उनके अनुसार धर्मनिरपेक्षता के आड़ में भारतीय संविधान, राजनीति और कानूनी परंपरा के द्वारा भारत में मुख्यतः मुस्लिमपरस्ती की जा रही है; और उन्हें ऐसे विशेषाधिकार प्रदान किये गये हैं जो अन्य भारतीयों को प्राप्त नही है.
3. तीसरा आरोप भारतीय धर्मनिरपेक्षता को समुदायवादी पहचान को राष्ट्रीय पहचान पर वरीयता देने का लगाया जाता है. इसके अनुसार भारतीय धर्मनिरपेक्षता के कारण यहाँ की जनता अपनी पहचान हिन्दू, मुस्लिम, सिख और इसाई के रूप में ज्यादा करती है; जबकि उनकी पहली पहचान भारतीय की होनी चाहिए.
4. चौथी प्रकार की आलोचना इस आधार पर की जाती है कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता अभी तक अल्पसंख्यकों को यहाँ के अन्य समुदायों से जोड़ने में असफल साबित हुई है. अगर विदेशी विचारकों के द्वारा भारत पर हिन्दू संस्कृति का पोषक होने का आरोप लगाया जाता है तो उसका कारण यह नही है कि यहाँ मुस्लिमों के प्रति कोई भेदभाव किया जाता है; बल्कि मुस्लिम खुद समुदायवादी प्रवृति के होते है और किसी अन्य धार्मिक समूहों के साथ घुलमिल कर रहना नही चाहते.

5. भारत में धर्मनिरपेक्षता की पंचम आलोचना मुख्यतः इसके आधुनिक स्वरूप के कारण की जाती है। इसे आधुनिकता की मूर्खता के नाम से जाना जाता है।. इस विचार के अनुसार प्राचीन काल में भारत में विभिन्न धर्मों के बीच विवाद उतना विस्तृत नही था, उस समय लोग परस्पर मिल जुल कर रहते थे और उनके बीच धार्मिक सहिष्णुता पाई जाती थी. लेकिन धर्मनिरपेक्षता सम्बन्धी आधुनिक अवधारणा के उदय के कारण विभिन्न समुदायों के बीच सहआस्तित्व का प्रश्न बड़ा हो गया है और वे एक दूसरे को संदेह की नजर से देखते हैं. **आशीष नंदी** के अनुसार "*जैसे-जैसे भारत आधुनिक हो रहा है, धर्मधारित हिंसा में वृद्धि हो रही है. वे उन परम्परागत जीवनमूल्यों की प्रशंसा भी करते दिखाई दे जाते हैं, जिन्होंने सदियों से सहिष्णुता के आतंरिक सिद्धांतों की रचना की थी.*"
6. भारतीय धर्मनिरपेक्षता की आखिरी आलोचना मुख्यतः सांस्कृतिक विषमता के आधार पर की जाती है. इसके प्रायोजकों का मानना है कि भारतीय संस्कृति का स्वरुप मुख्यतः हिंदुत्व से तय होता है अर्थात हिंदुत्व यहाँ के संस्कृति का आधार है. अतः हिन्दू को अन्य धर्मों के अनुरूप एक धर्म मानना एक त्रुटी है और ऐसा करने से भारतीय संस्कृति की पहचान प्रभावित होती है.**(सेन 2011 : 267-68)**

इन तमाम आलोचनाओं का प्रो. अमर्त्य सेन ने समुचित जवाब भी दिया है. भारत में धर्मनिरपेक्षता को नकारने वाली अवधारणा के प्रति अपनी असहमति व्यक्त करते हुए प्रो.सेन कहते हैं कि भारत को पाकिस्तान का हिन्दू प्रतिरूप कहना कहीं से भी न्यायोचित नहीं है। जहाँ पाकिस्तान में केवल मुस्लिम प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति बन सकता है; वही भारत में स्वतंत्रता से लेकर आज तक लगभग सभी धर्मों के लोग देश के सर्वोच्य पदों पर आसीन हुए हैंहिंदू के अलावाहाँ हिन्दूअलावा मुस्लिम, सिख, दलित और महिला भी राष्ट्रपति जैसे सर्वोच्य पद पर आसीन हो चुके हैं।के हैं. यहाँ कानूनी और संवैधानिक रूप से किसी व्यक्ति को किसी भी पद धारण करने पर कोई रोक नहीं है। अतः भारत को पाकिस्तान का हिन्दू प्रतिरूप कहना तथ्यों से दूर एक अतार्किक परिकल्पना है.

कुछ हिन्दू परम्परावादियों द्वारा भारतीय धर्मनिरपेक्षता को मुस्लिमों के पक्ष में पक्षपाती होने के आरोप पर प्रो.अमर्त्य सेन कहते हैं कि ऐसा आरोप मात्र राजनीतिक लाभ और अपनी कमियों से ध्यान हटाने के उद्देश्य से लगाया जाता है. इस आरोप को लगाते समय प्रायः यह तर्क दिया जाता है कि भारतीय राज्य ने हिन्दुओं के तो धार्मिक कानून में हिन्दू-कोड बिल के तहत बदलाव कर दिया लेकिन मुस्लिम पर्सनल लॉ में किसी भी तरह का बदलाव नही करके मुस्लिम मुल्लाओं को खुश किया जा रहा है. प्रो.अमर्त्य सेन कहते हैं कि यह आरोप बिल्कुल तर्कहीन है। अगर भारतीय राज्य ने हिन्दू कोड बिल के द्वारा अगर हिन्दू धर्म में सुधार किया तो इससे कही न कही हिन्दू धर्म का आधार ज्यादा विस्तृत हुआ और इससे भेदभाव दूर हुआ, जिसका लाभ अंततः हिन्दुधर्म को ही हुआ; लेकिन अगर राज्य मुस्लिमों के पर्सनल लॉ में कोई सुधार नही कर पाया तो इससे यह कही नही साबित होता कि उसने मुस्लिमों का पक्ष लिया बल्कि इससे सबसे ज्यादा नुकसान मुस्लिम महिलाओं का ही हुआ है.

इसीप्रकार अन्य आलोचनाओं जैसे कि भारतीय धर्मनिरपेक्षता सामुदायिक पहचान को राष्ट्रीय पहचान के ऊपर वरीयता देती है, के जवाब में प्रो. सेन कहते हैं कि सामुदायिक पहचान और राष्ट्रीय पहचान में किसी प्रकार की प्रतिस्पनहीं है। अपने कथन के पक्ष में तर्क देते हुए वे कहते हैं कि पाकिस्तान के उन्नायक मुहम्मद अली जिन्ना अपने निजी जीवन में धर्म को कोई महत्व नही देते थे, जबकि सार्वजनिक जीवन विशेषकर राजनीति के क्षेत्र में उन्होंने धर्म का उपयोग करते हुए देश के धार्मिक विभाजन की नींव की नींव रखी. वहीं दूसरी तरफ मौलाना आजाद और महात्मा गाँधी अपने निजी व सार्वजानिक दोनों जीवन में धर्म को बहुत महत्व देते थे, लेकिन वे पक्के राष्ट्रवादी भी थे और कभी भी अपने धार्मिक पहचान और राष्ट्रीय पहचान में विरोधाभास नही होने दिया. इसप्रकार उपरोक्त आलोचना तर्क पर आधारित नही है.

कुछ आलोचकों के इस आरोप पर की भारत में धर्मनिरपेक्षता की आड़ में मुस्लिमों की राष्ट्रीय निष्ठा को नजरअंदाज किया जाता है. प्रो. सेन कहते हैं कि किसी भी भारतीय नागरिक के राष्ट्रीय निष्ठा पर संदेह उचित नही है. आज मुस्लिम अगर भारत में रहते हैं, भारतीय सेवाओं, नागरिक प्रशासन तथा राष्ट्र निर्माण में वे कंधे-से कंधा मिलाकर अन्य देशवासियों के साथ अपना योगदान कर रहे हैं. उन्होंने देश विभाजन के समय पाकिस्तान की अवधारणा को नकार कर अगर भारत में रहना स्वीकार किया था. अतः उनकी देशभक्ति और निष्ठा पर सवाल खड़ा करना कही से भी राष्ट्रीय हित और सामाजिक सदभावना के अनुरूप नही है.

धर्मनिरपेक्षता के आधुनिकता विरोधी आशीष नंदी के आरोपों पर प्रो.सेन का कहना है कि आधुनिकता को परिभाषित करना अपने-आप में बहुत ही समस्यापूर्ण है. यह सही है कि प्राचीन और मध्यकालीन समय में समाज में सहिष्णुता का माहौल था, लेकिन उस समाज ने विभिन्न समूहों के बीच सहमति के कुछ विन्दुओं की खोज कर ली थी. वर्तमान में भी धर्मनिरपेक्षता के मूल्य द्वारा ऐसे सामंजस्य के बिन्दुओं की खोज जारी है. अगर वर्तमान में कुछ हिंसा हो भी रही है, तो इसका मतलब यह नही है कि धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा अप्रासंगिक हो चुकी है बल्कि आवश्यकता और ज्यादा धर्मनिरपेक्ष होने की है.

कुछ आलोचकों के अनुसार कि धर्मनिरपेक्षता की संकल्पना भारत की सांस्कृतिक पहचान को नकारती है क्योकि भारत की पहचान शुरू से ही हिन्दू संस्कृति पर आधारित रही है और धर्मनिरपेक्षता भारत के सभी संस्कृतियों को समान महत्व देकर सांस्कृतिक विषमता की स्थिति पैदा करती है. इस आलोचना के जवाब में प्रो.सेन कहते हैं कि भारतीय संस्कृति केवल हिन्दू संस्कृति की पर्याय नही है बल्कि यह सभी संस्कृतियों की सांझी विरासत है. लेकिन अगर यह दावा भी मान लिया जाये कि भारतीय संस्कृति हिन्दू संस्कृति की पर्याय रही है तो इसके आधार पर और संस्कृतियों के साथ भेदभाव को किसी भी आधार पर सही नही ठहराया जा सकता.**(सेन 2011 : 281-282)**

**निष्कर्ष**

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से लेकर आज तक के भारतीय धर्मनिरपेक्षता की यात्रा का विश्लेषण करे तो हम पाते हैं कि न तो इसे पूरी तरह नकारा जा सकता है, और नही इसे पूरी तरह दोषमुक्त ही किया जा सकता है. स्वतंत्रता के बाद हमारे संविधान निर्माताओं ने धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा को भारत जैसे विविधता वाले समाज में विभिन्न धार्मिक समूहों के बीच समन्वय और भाईचारा स्थापित करने के उद्देश्य से स्वीकार किया था. इसका उद्देश्य विभिन्न धर्मों के बीच राज्य द्वारा किसी भी प्रकार के भेदभाव को नकारना और सभी धर्मों को राज्य द्वारा समान प्रोत्साहन की नीति पर आधारित था. लेकिन व्यावहारिक राजनीति के दौर में राजनीतिज्ञ सभी धर्मों के प्रति एक समान सम्मान के नाम पर धार्मिक समूहों के प्रति तुष्टिकरण की नीति का अनुसरण करने लगे या फिर वे अपना वोट बैंक बनाने के लिए लोगों को धर्म के नाम पर संघटित करने लगे. . इसप्रकार जबकि भारतीय लोकतंत्र में राजनीति एवं धर्म को अलग करने के लिए एक मजबूत संवैधानिक व्यवस्था की गयी थी, लेकिन वास्तविक व्यवहार में अधिकतर राजनीतिक दलों ने भारत की वास्तविक संवैधानिक व्यवस्था को आत्मसात नही किया है. इसके लिए दो महत्वपूर्ण कारण हैं।. प्रथम भारत के अधिकतर लोग व्यक्तिगत जीवन में गहराई के साथ धार्मिक हैं।. अतः वे धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत को कही ना कही बहुसंख्यक धर्म विरोधी मानते हैं. अतः एक अपेक्षाकृत धार्मिक समाज में धर्मनिरपेक्ष राज्य को यह सिद्ध करना पड़ता है कि नागरिकों की धार्मिक भावनाओं को चोट पहुचाने की इसकी इच्छा नही है.

भारत जैसे विविधतापूर्ण समाज के स्थायित्व और विकास के लिए यह बहुत जरुरी है कि यहाँ पाए जाने वाले सभी धार्मिक समूहों के मध्य परस्पर सदभावना और समरसता का माहौल रहे. इस सदभावना और समरसता को स्थापित करने में धर्मनिरपेक्षता की अवधारणा एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करती है. भारत जैसे देश में धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य केवल राज्य और धर्म के बीच निरपेक्ष संबंधों से नहीं है; बल्कि समाज द्वारा धर्मनिरपेक्षता की स्वीकृति और उसके आदर्शों पर चलना और भी आवश्यक है. वर्तमान में भारत में साम्प्रदायिक एकता को कायम रखने के लिए गाँधी की "हृदयगत एकता" के दर्शन को प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है, हृदयगत एकता का तात्पर्य सभी मनुष्यों के मध्य आतंरिक मानवीय एकता से है. किसी भी लोकतान्त्रिक देश की राजनीति समाज से प्रभावित होती है; और समाज मनुष्यों का समूह होता है, अतः प्रत्येक व्यक्ति अगर धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों में विश्वास करे तो अमूनन समाज भी धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों पर आधारित होगा; और अगर समाज धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों पर आधारित होगा तो राजनीति की प्रकृति निश्चित रूप से धर्मनिरपेक्ष होगी.

## संदर्भ सूची

1. Nigam, Aditya. "Secularism, modernity, nation: Epistemology of the Dalit critique." *Economic and Political Weekly* (2000): 4256-4268.

2. Jha, Shefali. "Secularism in the Constituent Assembly Debates, 1946-1950."*Economic and Political Weekly* (2002): 3175-3180.
3. Bajpai, Rochana. "Constituent Assembly debates and minority rights."*Economic and Political Weekly* (2000): 1837-1845.
4. Bajpai, Rochana. *Debating Difference: Group Rights and liberal democracy in India*—Oxford University Press, reprinted in 2012 and 2011.
5. Ganguly, Sumit. "The crisis of Indian secularism." *Journal of Democracy* 14, no. 4 (2003): 11-25.
6. Bhargava, Rajeev, ed. *Secularism and Its Critics*. New York: Oxford University Press, 1998.
7. Bhargava, Rajeev. "Giving secularism its due." *Economic and Political Weekly*(1994): 1784-1791.
8. Chatterjee, Partha. "Secularism and toleration." *Economic and Political Weekly*(1994): 1768-1777.
9. Madan, Triloki N. "Secularism in its place." *The Journal of Asian Studies* 46, no. 04 (1987): 747-759.
10. Smith, Donald Eugene. *India is a secular state*. Princeton: Princeton University Press, 1963.
11. Sen, Amartya, Kaushik Basu, and S. Subramanyam. "Secularism and Its Discontents." *Unravelling the Nation: Sectarian Conflict and India's Secular Identity* (1996).
12. Narang, Amarjit S. *Indian government and politics*. Gitanjali Publishing House, 1987.
13. Sen, Amartya. *The Argumentative Indian: Writings on Indian History, Culture, and Identity*. Macmillan, 2005.
14. Basu, Durga Das. *Introduction to the Constitution of India*. Prentice-Hall of India, 1982.
15. Bk, Sharma. *Introduction to the Constitution of India*. PHI Learning Pvt. Ltd., 2007.
16. Singh, Mahendra Prasad, and Shibani Kinkar Chaube, eds. *Indian Constitution: a review*. Har-Anand Publications, 1997.
17. Dubey, A. K. (2019). *Hindu-Ekta Banam Jnan Kee Rajneeti* (Vol. 1). Vani Prakashan.
18. Singh, A. अकबर और उनके धार्मिक विचार: समन्वय, सहिष्णुता और धर्मनिरपेक्षता का स्वरूप. *IJLRP-International Journal of Leading Research Publication*, *6*(1).
19. Shukla, P. K. सम्राट अशोक की धम्म नीति की वर्तमान ऐतिहासिक प्रासंगिकता. *IJAIDR-Journal of Advances in Developmental Research*, *16*(1).
20. डा0 सदगुरु पुष्पम. (2025). भारत में धर्मनिरपेक्षता का व्यावहारिक पक्ष-एक विश्लेषणात्मक अध्ययन. *ldealistic Journal of Advanced Research in Progressive Spectrums (IJARPS) eISSN–2583-6986*, *4*(04), 347-360.